Indian J. Soc. & Pol. 11 (02):71-74:2024 **ISSN: 2348-0084 (PRINT)**
February-June 2023 (31 July 2024) **ISSN: 2455-2127(ONLINE)**

स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचारों की प्रासंगिकता

रघुनाथ शरण सिंह[1]

[1]असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षा शास्त्र विभाग,श्री बजरंग स्नातकोत्तर महाविद्यालय दादर, आश्रम, सिकन्दरपुर, बलिया,उ0प्र0,भारत

ABSTRACT

शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली एक सोउददेश्य प्रक्रिया है। शिक्षा शब्द का प्रयोग व्यापक तथा संकुचित दोनों ही अर्थों में किया जाता है। व्यापक अर्थ में शिक्षा से तात्पर्य मनुष्य के पर्यावरण में मौजूद उन सभी तत्वों से है जो उसके शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक तथा व्यक्तित्व सम्बन्धी पक्षों का निर्माण करते हैं। संकुचित अर्थ में शिक्षा का अर्थ है, मनुष्य की हर पीढ़ी में अपेक्षित ज्ञान, कौशल, अभिवृत्ति एवं मूल्यों का विकास करना। इस कार्य के लिए विद्यालयों तथा शैक्षणिक संस्थानों की सहायता ली जाती है और प्रत्येक समाज इस प्रकार की व्यवस्था औपचारिक ढंग से करता है। इस प्रकार शिक्षा एक प्रक्रिया के रूप में जिसका सम्पादन तथा संचालन औपचारिक अथवा निरोपचारिक दोनों ही रीतियों से किया जाता है। प्रासंगिक शिक्षा भी इसका एक महत्वपूर्ण स्वरूप है जिसे हम किसी व्यक्ति या परिस्थिति विशेष के संपर्क में अनौपचारिक रूप में या प्रसंगवश ग्रहण करते है। शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली एक सोउददेश्य प्रक्रिया है। शिक्षा शब्द का प्रयोग व्यापक तथा संकुचित दोनों ही अर्थो में किया जाता है। व्यापक अर्थ में शिक्षा से तात्पर्य मनुष्य के पर्यावरण में मौजूद उन सभी तत्वों से है जो उसके शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक तथा व्यक्तित्व सम्बन्धी पक्षों का निर्माण करते हैं। संकुचित अर्थ में शिक्षा का अर्थ है– मनुष्य की हर पीढ़ी में अपेक्षित ज्ञान, कौशल, अभिवृत्ति एवं मूल्यों का विकास करना। इस कार्य के लिए विद्यालयों तथा शैक्षणिक संस्थानों की सहायता ली जाती है और प्रत्येक समाज इस प्रकार की व्यवस्था औपचारिक ढंग से करता है। इस प्रकार शिक्षा एक प्रक्रिया के रूप में जिसका संपादन तथा संचालन औपचारिक अथवा निरोपचारिक दोनों ही रीतियों से किया जाता है। प्रासंगिक शिक्षा भी इसका एक महत्वपूर्ण स्वरूप है जिसे हम किसी व्यक्ति या परिस्थिति विशेष के संपर्क में अनौपचारिक रूप में या प्रसंगवश ग्रहण करते है।

KEYWORDS: *स्वामी विवेकानन्द, शिक्षा, वेदांत, समाज, प्रासंगिकता।*

भारतीय दर्शनों में ज्ञान शब्द वही अर्थ रखता है, जो की व्यापक अर्थो में शिक्षा का होता है। अमर–कोश में शिक्षा शब्द का प्रयोग पड् वेदांगो में से एक वेदांग के लिए प्रयुक्त हुआ है। उस समय शिक्षा का प्रयोजन वेदों की ऋचाओं का शुद्ध उच्चारण सीखना था। कदाचित् उस युग में वेदों का पठन–पाठन ही शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य रहा होगा। भर्तृहरि ने 'नीति शतक' में लिखा है '' विद्याहीन मनुष्य पशु है।'' हमारी प्राचीन कालीन शिक्षा प्रणाली में छात्रों को शिक्षा देते समय वैदिक शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता था। उस समय शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य विद्यार्थियों में नैतिक विकास करना था। जगतगुरू शंकराचार्य के अनुसार–सः विद्या या विमुक्तये, अर्थात् ''विद्या वही है जो मुक्ति दिलाए।''

यूनानी दार्शनिक प्लेटो शरीर और आत्मा दोनों के महत्व को स्वीकार करते थे। उनके अनुसार – '' शिक्षा का कार्य मुनष्य के शरीर और आत्मा को वह पूर्णता प्रदान करता है जिससे कि वे योग्य है।'' पाश्चात्य दार्शनिकों में प्रयोजनवादी दार्शनिक मुनष्य को सामाजिक प्राणी मानते हैं। प्रयोजनवादी दार्शनिक जॉन डीवी के अनुसार – '' शिक्षा व्यक्ति की उन सब योग्यताओं का विकास है जो उसमें अपने पर्यावरण पर नियंत्रण रखने तथा अपनी संभावनाओं को पूर्ण करने की सामर्थ्य प्रदान करें।'' भारतीय दार्शनिकों के अनुसार शिक्षा इतनी व्यापक एवं अनुभूतिपरक प्रक्रिया है कि उसे केवल अनुभव किया जा सकता है, वर्णन करना संभव नहीं है। उपनिषद शिक्षा के सम्बन्ध में कहते हैं कि शिक्षा अनुभूति परक ऐसी शिक्षा है जो स्वतः व्यवस्थित होती है इसकी कोई निश्चित पद्धति नहीं होती है फिर भी यह विशेष पद्धति से युक्त होती है। युग पुरूष महात्मा गांधी के अनुसार – '' वास्तविक शिक्षा वह है जो बालक की वौद्धिक एवं शारीरिक क्षमताओं को उनके अंदर से बाहर प्रकट करें और उद्दीप्त करें।''स्वामी विवेकानन्द का मानना था कि जब तक हम भौतिक दृष्टि से संपन्न एवं सुखी नहीं होते तब तक ज्ञान, कर्म, भक्ति और योग, ये सब कल्पना की वस्तु है। लौकिक दृष्टि से इन्होंने नारा दिया–हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जिसके द्वारा चरित्र का गठन हो, मन का बल बढ़े, बुद्धि का विकास हो और मनुष्य स्वालंबी बने। स्वामी जी इस प्रकार की शिक्षा को मनुष्य के निर्माण की शिक्षा कहते थे। परन्तु स्वामी जी मानव जीवन का अंतिम उद्देश्य मानव के अंदर छिपी आत्मा की अनुभूति ही मानते थे। पारलौकिक दृष्टि से इन्होंने उद्घघोषण की–'' शिक्षा मनुष्य की अंतर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति है।''

शिक्षा जीवन क्रिया का एक अनिवार्य अंग है जो आजीवन चलता रहता है। गीता में शिक्षा की व्याख्या इस प्रकार से की गई है–'' निष्काम कर्म करते हुए ब्रम्हा ज्ञान एवं आत्मज्ञान का बोध प्राप्त करते हुए जीवन व्यतीत करना ही शिक्षा का लक्ष्य माना गया है। कर्म योग का ज्ञान से समसहयोग करना ही शिक्षा है।'' भारतीय शिक्षा

1: Corresponding Author

दर्शन में व्यक्ति के सर्वांगीण विकास की बात समाहित के साथ–साथ, अध्ययन–अध्यापन, चिंतन, मनन, अन्वेषण आदि करके ज्ञान, भाव और कर्म में साम्य भी स्थापित करना भी सामिल किया गया है। लौकिक ज्ञान के साथ–साथ ब्रम्हा ज्ञान, ब्रम्हाण्ड ज्ञान, तथा आत्मज्ञान अर्जित करना भी शिक्षा है।

बंगाल के कोलकाता नगर के उत्तर भाग में सिमुलिया मोहल्ले में गौर मोहन मुखर्जी गली में रहने वाले विश्वनाथ दत्त के यहां 12 जनवरी 1863 ई0 को छठी संतान के रूप में एक बालक ने जन्म लिया जिनका घरेलू नाम वीरेश्वर तथा औपचारिक नाम नरेंद्रनाथ दत्त था। इनकी मां श्रीमती भुवनेश्वरी देवी बड़ी बुद्धिमती, गुणवती धर्म परायण, एवं परोपकारी थी। नरेंद्र नाथ दत्त पर इनका अमिट प्रभाव पड़ा। नरेंद्र नाथ दत्त बहुमुखी प्रतिभा एवं व्यक्तित्व के धनी थे। नरेंद्र नाथ दत्त शुरू से ही बड़े जिज्ञासु व्यक्ति थे। पढ़ाई के दौरान उनके कॉलेज के प्रधानाचार्य श्री हेस्टी ने ही नरेंद्र नाथ को एक बार रामकृष्ण परमहंस से मिलने की प्रेरणा दी थी। 1881 ई0 को रामकृष्ण परमहंस के पास मिलने के लिए पहुंचे और पूछा–क्या आपने ईश्वर को देखा है ? परमहंस ने उत्तर दिया हां, वैसे ही जैसे मैं तुमको देख रहा हूँ और यह कहते हुए उन्होंने अपना दाहिना चरण नरेंद्रनाथ की शरीर पर रख दिया। चरण के रखते ही नरेंद्र नाथ को लगा कि सारा संसार घूम रहा है और एक शून्य में समाता जा रहा है। नरेन्द्र नाथ भय से चीख पड़े। रामकृष्ण परमहंस ने हंसते हुए कहा, अच्छा अब शांत हो जाओ। इस एक घटना ने नरेन्द्रनाथ की जीवन को पूर्ण रूप से बदल दिया। धीरे–धीरे वह रामकृष्ण परमहंस के निकट संपर्क में आते गए और उनकी मृत्यु के बाद उनके आध्यात्मिक उत्तराधिकारी बन गए।

स्वामी विवेकानन्द जी केवल संत ही नहीं, एक महान देशभक्त, वक्ता, विचारक, लेखक तथा मानव प्रेमी भी थे। विवेकानन्द जी का संगीत, साहित्य और दर्शन में विशेष रूचि थी। स्वामी जी ने 25 वर्ष की उम्र में ही वेद पुराण, बाइबल, दास कैपिटल, कुरान, धम्मपद, तनख, गुरूग्रंथ साहिब, अर्थशास्त्र आदि दर्शन की तमाम तरह की विचारधाराओं का अध्ययन कर लिया था। विवेकानन्द पर वेदांत दर्शन दर्शन, बुद्ध के अष्टांगिक मार्ग और गीता के कर्मवाद का भी गहरा प्रभाव पड़ा। स्वामी जी भारत भूमि को आध्यात्मिक का आदि स्रोत बताते हुए कहते हैं कि–'' यही वह भूमि है जहां ज्ञान ने अन्य देशों में जाने से पूर्व अपनी आवास–भूमि बनाया था। यही सर्वप्रथम मानव प्रकृति के रहस्यों की जिज्ञासाओं के अंकुर उगे थे। यही आत्मा की अमरता, एक परमापिता परमेश्वर की सत्ता, प्रकृति और मनुष्य के भीतर ओत–प्रोत एक परमात्मा के सिद्धान्त, सर्वप्रथम उठे और यही धर्म तथा दर्शन की उच्चतम सिद्धांतो ने अपने चरम शिखर स्पर्श किए।''

भारत देश को अमर भारत की संज्ञा देते हुए स्वामी जी ने कहा कि–''एक समय था जब ग्रीक सेनाओं के सैनिक संचालन के पदाघात से धरती कापा करती थी किन्तु पृथ्वी तल पर से उसका अस्तित्व मिट गया। अब सुनाने के लिए उसकी एक गाथा ही शेष है। ग्रीकों का यह गौरव सूर्य सदा–सदा के लिए अस्त हो गया है। इसके अलावा कई अन्य गौरवशाली जातियां आई और चली गई। कुछ वर्ष उन्होंने बड़ी चमक–दमक के साथ गर्व से छाती फुलाकर अपना प्रभुत्व फैलाया पर शीघ्र ही पानी के बुलबले के समान मिट गई। मानव जीवन पर यह जातियां केवल इतनी ही छाप डाल सकी। किन्तु आज भी हम जीवित हैं और आज भी हमारे पुराण, ऋषि, मुनि वापस लौट आए तो आश्चर्य न होगा, उन्हें ऐसा नहीं लगेगा कि किसी नए देश में गए है, यही वह भारतवर्ष है जो अनेक शताब्दियों तक शत–शत विदेशी आक्रमणों के आघातों को झेल चुका है। यही वह देश है जो संसार की किसी भी चट्टान से अधिक दृढता के साथ अपने पौरूष एवं अमर जीवन शक्ति के साथ खड़ा हुआ है। इसकी जीवन शक्ति भी आत्मा के समान ही अनादि, अनन्त एवं अमर है। हमे ऐसे देश की संतान होने का गौरव प्राप्त है।''

स्वामी जी के बारे में गुरूदेव रविन्द्रनाथ ठाकुर ने एक बार कहा था ''यदि आप भारत को जानना चाहते हैं तो विवेकानन्द को पढ़िए। उनमें आप सब कुछ सकारात्मक ही पाएंगे नकारात्मक कुछ भी नहीं।''इतिहासकार रोमा रोला ने उनके बारे में कहा था–'' उनके द्वितीय होने की कल्पना करना भी असम्भव है वे जहां भी गए सर्वप्रथम ही रहे। हर कोई उनमें अपने नेता का दिग्दर्शन करता था। वह ईश्वर के प्रतिनिधि थे और सब पर प्रभुत्व प्राप्त कर लेना ही उनकी विशिष्टता थी।''इस प्रकार स्वामी जी बहुमुखी प्रतिभा एवं व्यक्तित्व के धनी व्यक्ति थे और उनके अन्दर दुर्बलता नाम की कोई जीच नहीं थी। इसीलिए उन्होंने कहा था '' यदि तुम अपने को दुर्बल समझोगे, तो तुम दुर्बल हो जाओगे, बलवान सोचोगे तो बलवान बन जाओंगे।''

भारत में शिक्षा

स्वामी जी शिक्षा के द्वारा मनुष्य को लौकिक और पारलौकिक दोनों जीवनों के लिए तैयार करना चाहते थे। उनका विश्वास था कि जब तक हम भौतिक दृष्टि से सम्पन्न एवं सुखी नहीं होते तब तक ज्ञान, कर्म एवं भक्ति योग में सब कल्पना की वस्तु है। लौकिक दृष्टि से उन्होंने नाराा दिया। हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जिसके द्वारा चरित्र का गठन हो, मन का बल बढे, बुद्धि का विकास हो और मनुष्य स्वावलम्बी बने तथा पारलौकिक दुष्टिकोण से शिक्षा का अर्थ उस पूर्णता को व्यक्त करना मांना जो सब मनुष्यों में पहले से विद्यमान है। स्वामी जी के अनुसार शिक्षा इस प्रकार देनी चाहिए जिसमें मन की एकाग्रता, चरित्र–गठन, व्यक्तिव–विकास, प्रबल आत्मविश्वास, श्रद्धा, वेदांत आदि का समावेश हो। स्वामी जी के अनुसार–शिक्षा का सार मन की एकाग्रता प्राप्त करना है, तथ्यों का संकलन नहीं। यदि मुझे फिर से अपनी शिक्षा आरम्भ करनी हो और इसमें मेरा वस चले, तो मैं तथ्यों का अध्ययन कदापि न करूँ। मै मन की एकाग्रता और अनाशक्ति का सामथर्य बढ़ाता और उपकरण के पूर्णतया तैयार होने पर उससे इच्छानुसार तथ्यों का संकलन करता।''(भगवान बुद्ध का संसार को संदेश एवं अन्य व्याख्यान और प्रवचन, 71)

स्वामी जी धार्मिक शिक्षा के संदर्भ में कहते हैं कि जिस प्रकार से संगीत में एक प्रमुख स्वर होता है, उसी प्रकार हर राष्ट्र के जीवन में एक प्रधान तत्व होता है, अन्य सभी तत्व इसी में केन्द्रित हो जाते हैं। भारत का प्रधान तत्व है–धर्म। स्वामी जी कहते हैं कि हमें धर्म का आधार नहीं छोड़ना चाहिए। '' याद रखो, यदि तुम पाश्चात भौतिक वादी सभयता के चक्कर में पड़कर आध्यात्मिकता का आधार त्याग दोगे तो उसका परिणाम होगा कि तीन पीढ़ियों में तुम्हारा जातीय अस्तित्व मिट जाएगा क्योंकि राष्ट्र का मेरूदण्ड टूट जाएगा, राष्ट्रीय भवन की नीव ही खिसक जाएगी। इन सब का परिणाम होगा सर्वतोमुखी सत्यानाश। अतः मित्रों! एक ही मार्ग शेष है कि हम अपनी प्राचीन पूर्वजों से चली आई अमूल्य विरासत आध्यात्मिकता की पकड़ को कदापि ढीला न होने दें। इसी लिए चाहे तुम्हारी आध्यात्मिकता में आस्था हो या ना हो, राष्ट्रीय जीवन की रक्षा हेतु तुम्हें आध्यात्मिकता के आधार पर टिके रहना होगा। फिर दूसरा हाथ बढ़ाकर अन्य जातियों से जो कुछ लेना चाहो लो, किन्तु जो भी उनसे ग्रहण करो उसे अपने जीवन आदर्शो के अधीन कर दो।

शिक्षा के स्वरूप के सबन्ध में स्वामी जी कहते है कि शिक्षा को मात्र सूचना तक नहीं सीमित करना चाहिए। तमाम असंबद्ध जानकारियों को मस्तिष्क में ठूंस देने से कोई लाभ नहीं। सूचना का अपने में कोई महत्व नहीं है। जो विचार जीवन निर्माण में सहायक हो उनकी अनुभूति करना आवश्यक है। स्वामी जी के अनुसार केवल कुछ विचारों को रट कर डिग्री प्राप्त कर लेना शिक्षा नहीं है। विदेशी भाषा में कुछ रटकर अपने को शिक्षित समझने की भूल शिक्षा को जानकारी या सूचना तक सीमित रखने का परिणाम है। स्वामी जी के शब्दों में–''यदि तुम केवल पांच ही परखे हुए विचार आत्मसात कर उनके अनुसार अपने जीवन और चरित्र का निर्माण कर लेते हो, तो तुम एक पूरे ग्रंथालय को कंठस्थ करने वाले की अपेक्षा अधिक शिक्षित हो। यदि शिक्षा का अर्थ जानकारी ही होता, तब तो पुस्तकालय संसार में सबसे बड़े संत हो जाते और विश्वकोश महान ऋषि बन जाते'' (भारत में विवेकानन्द – भारत का भविष्य)

स्वामी जी पुनः कहते हैं कि व्यक्ति में ज्ञान स्वत निहित है। ज्ञान स्वयं सिद्ध है। जन्म के समय बालक में ज्ञान राशि स्वतः निहित है। ज्ञान बाहर से नहीं आता, वह तो अंदर ही है। उस प्रच्छन्न ज्ञान को अनावृत्त करना है। बालक को अपने अंदर निहित ज्ञान का अन्वेषण करना है। जब हम कहते हैं कि मुनष्य जानता है तो इसका अर्थ है वह खोजना है। प्रकट करता है। मन में ही सारा निहित है, बाहरी संसार सुझाव या प्रेरणा मात्रा देता है, तब व्यक्ति अपने मन का ही अध्ययन करने के लिए प्रेरित होता है। जब हम कहते हैं कि न्यूटन ने गुरूत्वाकर्षण नियम का आविष्कार किया। तो क्या वह आविष्कार कहीं एक कोने में बैठा हुआ न्यूटन की प्रतीक्षा कर रहा था ? नहीं वह उसके मन में ही था। जब समय आया तो उसने उसे ढूंढ़ निकाला। संसार ने जो कुछ ज्ञान लाभ लिया है वह मन में ही था। बाह्य जगत तो तुम्हें अपने को अध्ययन में लगाने के लिए उद्दीपक तथा सहायक मात्र है, परन्तु प्रत्येक समय तुम्हारे अध्ययन का विषय तुम्हारा मन ही है। (कर्म योग, 2–3) स्वामी जी शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति का सर्वांगीण विकास चाहते हैं। इसीलिए उन्होंने कहा '' जो शिक्षा साधारण व्यक्ति को जीवन–संग्राम में समर्थ नहीं बना सकती, जो मनुष्य में चरित्र–बल, परिहित–भवना तथा सिंह के समान साहस नहीं ला सकती, वह भी कोई शिक्षा है ? जिस शिक्षा के द्वारा जीवन में अपने पैरों पर खड़ा हुआ जाता है, वास्तव में वही शिक्षा हैं'' (विवेकानन्द जी के संग में, 175) स्वामी जी शिक्षा के अन्तर्गत चरित्र गठन को महत्वपूर्ण मानते हैं और वह कहते है कि– '' क्या तुमने इतिहास में नहीं पढ़ा कि देश की मृत्यु का चिन्ह अपवित्रता या चरित्रहीनता के भीतर से होकर आया है। जब यह किसी जाति में प्रवेश कर जाती है, तो समझना कि उसका विनाश निकट आ गया है।'' (ज्ञान योग – 32)

स्वामी जी समाज में सभी के प्रति समता की भाव रखना चाहते थे। तत्कालीन समाज में ब्राम्हण अधिक मेधावी माना जाता था। इसीलिए उन्होंने तर्क दिया कि यदि ब्राम्हण अपने आप को बहुत मेधावी समझता है और शुद्र को जड़ वुद्धि मानता है तो शूद्रों के लिएए शिक्षा की आवश्यकता और भी बढ़ जाती है। यदि ब्राम्हण के लिए एक शिक्षक की जरूरत है तो शुद्र के लिए दस (10) शिक्षकों की व्यवस्था होनी चाहिए। स्वामी जी ने अद्वैत वेदान्त दर्शन के विचारों को आधुनिक समय के अनुरूप लोगों के दैनिक जीवन में लागू करने के लिए आवश्यक गुण धर्मो के साथ सरल रूप में प्रस्तुत किया। इसलिए स्वामी जी के वेदान्त को व्यावहारिक वेदांत कहा जाता है। स्वामी जी ने शिक्षा में वेदान्त का समावेश करते हुए कहा– '' यदि आपका आदर्श जड़ है, तो आप भी जड़ हो जाओगे। स्मरण रहे हमारा आदर्श है, परमात्मा। एक मात्र वे ही अविनाशी है अन्य किसी का अस्तित्व नहीं है, और उन परमात्मा की भांति हम भी सदा विनाशहीन है।

शिक्षा के उद्देश्य

स्वामी जी के अनुसार शिक्षा के द्वारा मनुष्य का भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार का विकास होना चाहिए। जो शिक्षक यह दोनों कार्य करें, उसे स्वामी जी मनुष्य निर्माण की शिक्षा कहते थे। मनुष्य के निर्माण की शिक्षा के लिए स्वामी जी ने निम्न उदेश्यों पर बल दिया है –

- चारित्रिक विकास का उद्देश्य।
- छात्र के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास का उद्देश्य।
- आध्यात्मिक विकास का उद्देश्य।
- त्याग की भावना के विकास का उद्देश्य।
- राष्ट्रीय एकता की भावना के विकास का उद्देश्य।
- पूर्णता की ओर अग्रसर होने तथा उसे प्राप्त करने का उद्देश्य।
- धर्म की प्रति सही दृष्टिकोण विकसित करने का उद्देश्य।
- श्रद्धा की भावना उत्पन्न करने का उद्देश्य।

- इच्छा शक्ति को सबल बनाने का उद्देश्य।
- विविधता में एकता की भावना के विकास का उद्देश्य।
- नैतिक विकास का उद्देश्य।
- समाज सेवा की भावना का उद्देश्य।
- व्यवसायिक विकास का उद्देश्य आदि।

इस प्रकार स्वामी जी के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य ऐसी होनी चाहिए, जो व्यक्ति को पूर्णता की ओर ले जाए। उसके अन्दर जो शक्तियां है, उन्हें वह पहचान सके। शिक्षा का उद्देश्य ऐसी होनी चाहिए जो छात्र के शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक, संवेगात्मक, नैतिक एवं आर्थिक विकास में सहयोग दें तथा छात्र को अपने संतुलित विकास के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करें, जो शिक्षा व्यक्ति का नैतिक विकास तथा चारित्रिक विकास नहीं करती, वह शिक्षा निरर्थक है। व्यक्ति का चरित्र, राष्ट्र का चरित्र बनाता है। व्यक्ति का नैतिक आचरण सामाजिक उत्थान में योगदान देता है। इस प्रकार स्वामी जी के अनुसार शिक्षा का एक मात्र उद्देश्य मानव का निर्माण करना होना चाहिए।

प्रासंगिकता

वर्तमान समय में स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचारों की प्रासंगिकता बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखती है। उनके शिक्षा सम्बन्धी विचारों में प्राचीन भारतीय, मूल्यों, आदर्शो और आधुनिक पश्चिमी मान्यताओं का समावेश है। स्वामी जी के अनुसार–शिक्षा का प्रथम उद्देश्य। अन्तर्निहित पूर्णता को प्राप्त करना है। उनके अनुसार लौकिक तथा आध्यात्मिक सभी ज्ञान मनुष्य के मन में पहले से विद्यमान होता है, इस पर पड़े आवरण को उतार देना ही शिक्षा है।

स्वामी जी के विचारों को वर्तमान संदर्भ में देखा जाय तो शिक्षा मनोविज्ञान के पूर्णतः अनुकूल है। वह केवल पुस्तकीय ज्ञान को शिक्षा नहीं मानते, केवल पोथियां पढ़ लेना शिक्षा नहीं है, ना ही अनेक प्रकार का सूचना प्राप्त करने का नाम शिक्षा है। केवल डिग्रियां लेना शिक्षा नहीं है। ज्ञान को सूचनाओं के रूप में बालक के दिमाग में ढूंसना मात्र शिक्षा का उद्देश्य नहीं है। बल्कि सीखे गए ज्ञान को जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में उचित प्रयोग करना ही वास्तव में शिक्षा है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली ऐसी है जिसमें बालक का मूल्यांकन उसके अच्छे अंकों पर ही निर्भर करता है। कम अंक आने, असफल होने से बालक में निराशा, तनाव, कुंठा उत्पन्न हो जाती है। कई बार बालक अपनी असफलता को स्वीकार नहीं कर पाता और अनुचित कदम उठा लेता है। ऐसे में स्वामी जी के विचार बालकों का मनोबल बढ़ाते है। उनका मानना था अपने को कभी कमजोर न समझे। अपना आत्मविश्वास बनाए रखे। उनके शब्दों में '' जो तुम सोचते हो वो हो जाओंगे, यदि तुम खुद को कमजोर सोचते हो, तुम कमजोर हो जाओंगे, अगर खुद को ताकतवर सोचते हो, तुम ताकतवर हो जाओंगे।''

इसलिए शिक्षा द्वारा छात्रों में आत्मविश्वास, आत्मबल तथा स्वालंबन उत्पन्न करना चाहिए। यह शिक्षा का उद्देश्य है। '' खुद को कमजोर समझना सबसे बड़ा पाप है।'' स्वामी जी का मानना था कि बालक का तन–मन से स्वस्थ रहना बहुत आवश्यक है। शारीरिक एवं मानसिक विकास भी होना चाहिए। स्वामी जी कहते हैं कि हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जिसे प्राप्त करके बालक अपने पैरों पर खड़ा हो सकें तथा अपना जीवन निर्वाह कर सके।'' उन्होंने बालक के भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिए शिक्षा को ज्ञान एवं कौशल के रूप में स्वीकार किया। बालक को जीवन संघर्ष के लिए तैयार करना होगा। इसके लिए उन्होंने तकनीकि एवं विज्ञान शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया। आज शिक्षा मौलिक अधिकार है, लेकिन स्वामी जी के समय में शिक्षा जन साधारण को सुलभ न थी किन्तु स्वामी जी का विचार था कि शिक्षा का प्रचार जन साधारण में होना चाहिए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, भी प्रत्येक व्यक्ति में निहित रचनात्मक क्षमताओं के विकास पर विशेष जोर देती है। यह नीति भी इस सिद्धान्त पर आधारित है कि शिक्षा से न केवल साक्षरता और संख्या ज्ञान जैसी बुनियादी क्षमताओं के साथ–साथ उच्चतर स्तर की तार्किक और समस्या समाधान सम्बन्धी संज्ञानात्मक क्षमताओं का विकास होना चाहिए बल्कि नैतिक सामाजिक और भावनात्मक स्तर पर भी व्यक्ति का विकास होना आवश्यक है। इस प्रकार स्वामी जी ने शिक्षा के उद्देश्य में शारीरिक, मानसिक, नैतिक, आध्यात्मिक, व्यावसायिक विकास तथा भेदभाव रहित सार्वभौमिक शिक्षा का समर्थन किया है तथा मानव के व्यक्तित्व निर्माण को प्राथमिकता दिया है। उन्होंने व्यावहारिक और आधुनिक दृष्टिकोण अपनाते हुए प्रौद्योगिकी, वाणिज्य, उद्योग, विज्ञान से जुड़ी पश्चिमी शिक्षा को भी महत्व दिया है। स्वामी जी के शैक्षिक विचार अत्यंत प्रासंगिक है जिसका अनुसरण कर वर्तमान समाज की समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

REFERENCES

पाण्डेय, के0पी0 (1919), *शिक्षा के दार्शनिक एवं सामाजिक आधार,* वाराणसीः विश्वविद्यालय प्रकाशन।

गुडविन, जोसेफ जोसिया (1896), *कर्म योग,* नागपुरः रामकृष्ण मठ।

गुडविन, जोसेफ जोसिया (1899), *ज्ञान योग,* नागपुरः रामकृष्ण मठ।

लाल, रमन बिहारी (2007*), शिक्षा के दार्शनिक एवं समाज शास्त्रीय सिद्धांन्त,* मेरठः रस्तोगी प्रकाशन।

पाण्डेय, राम शुक्ल, *शिक्षा के दार्शनिक आधार।*

ओड़ लक्ष्मी लाल के (2017), *शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि,* जयपुरः हिन्दी ग्रंथ अकादमी।

त्रिपाठी, निराला सूर्यकांत (2008), *स्वामी विवेकानन्द भारतीय व्याख्यान,* नागपुर : रामकृष्ण मठ।

नई शिक्षा नीति (2020), भारत सरकार।